Supporting Photos:

First page of research articles published form our faculty in the last five years 2020-2021 to 2016-2017.

2020-2021 Entry No. (1)

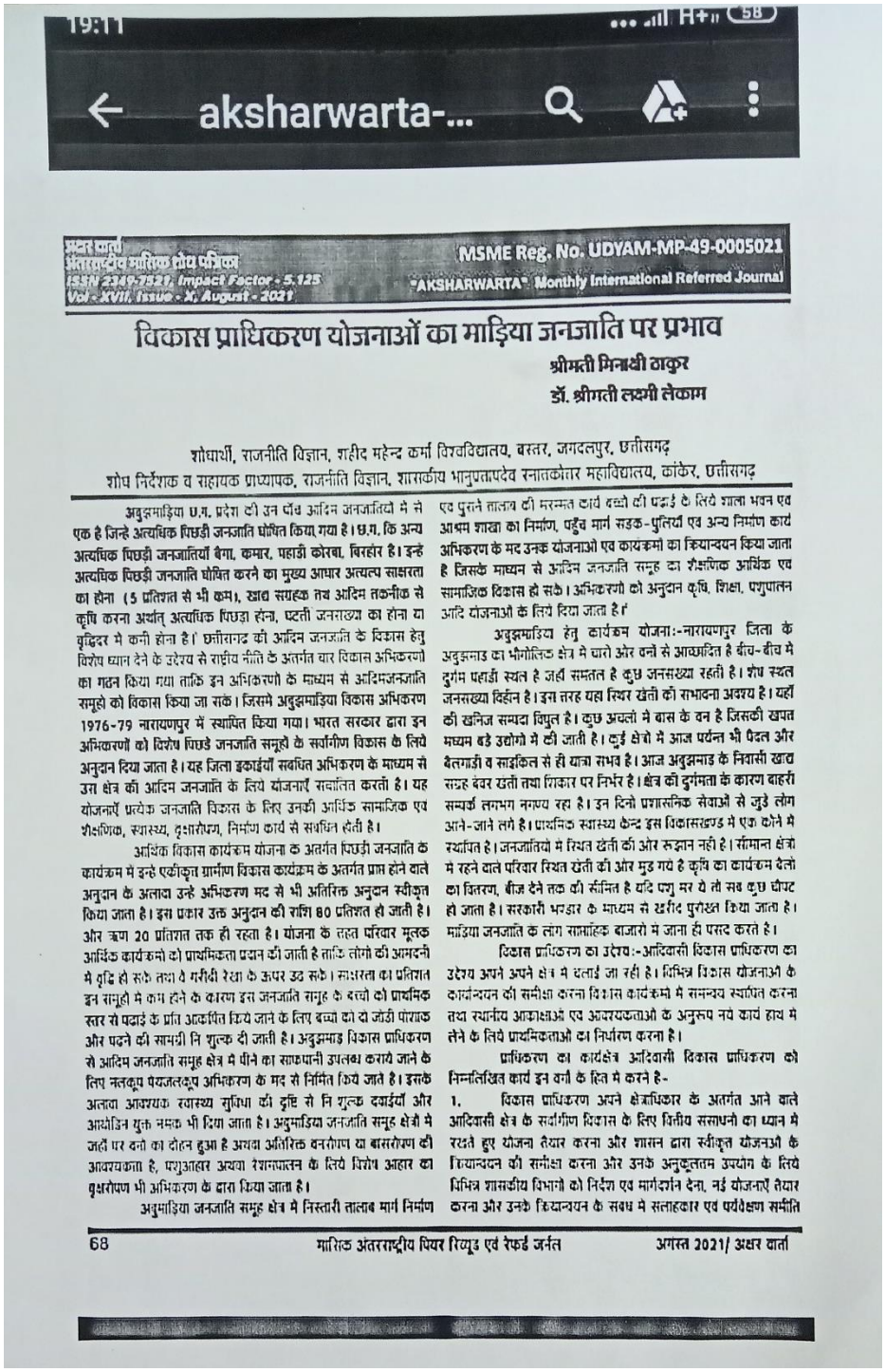

19:11

aksharwarta-...

अक्षर वार्ता
अंतरराष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2349-7521, Impact Factor - 5.125
Vol - XVII, Issue - X, August - 2021

MSME Reg. No. UDYAM-MP-49-0005021
"AKSHARWARTA" Monthly International Referred Journal

विकास प्राधिकरण योजनाओं का माड़िया जनजाति पर प्रभाव

श्रीमती मिनाक्षी ठाकुर

डॉ. श्रीमती लक्ष्मी लेकाम

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान, शहीद महेन्द्र कर्मा विश्वविद्यालय, बस्तर, जगदलपुर, छत्तीसगढ़

शोध निर्देशक व सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शासकीय भानुप्रतापदेव स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कांकेर, छत्तीसगढ़

अबुझमाड़िया छ.ग. प्रदेश की उन पाँच आदिम जनजातियों में से एक है जिन्हे अत्यधिक पिछड़ी जनजाति घोषित किया गया है। छ.ग. कि अन्य अत्यधिक पिछड़ी जनजातियाँ बैगा, कमार, पहाड़ी कोरबा, बिरहोर है। इन्हे अत्यधिक पिछड़ी जनजाति घोषित करने का मुख्य आधार अत्यल्प साक्षरता का होना (5 प्रतिशत से भी कम), खाद्य संग्रहक तथ आदिम तकनीक से कृषि करना अर्थात् अत्यधिक पिछड़ा होना, घटती जनसंख्या का होना या वृद्धिदर मे कमी होना है।' छत्तीसगढ़ की आदिम जनजाति के विकास हेतु विशेष ध्यान देने के उद्देश्य से राष्ट्रीय नीति के अंतर्गत चार विकास अभिकरणों का गठन किया गया ताकि इन अभिकरणों के माध्यम से आदिमजनजाति समूहो को विकास किया जा सकें। जिसमे अबुझमाड़िया विकास अभिकरण 1976-79 नारायणपुर में स्थापित किया गया। भारत सरकार द्वारा इन अभिकरणों को विशेष पिछड़े जनजाति समूहों के सर्वांगीण विकास के लिये अनुदान दिया जाता है। यह जिला इकाईयाँ संबंधित अभिकरण के माध्यम से उस क्षेत्र की आदिम जनजाति के लिये योजनाएँ संचालित करती है। यह योजनाऐं प्रत्येक जनजाति विकास के लिए उनकी आर्थिक सामाजिक एवं शैक्षणिक, स्वास्थ्य, वृक्षारोपण, निर्माण कार्य से संबंधित होती है।

आर्थिक विकास कार्यक्रम योजना के अंतर्गत पिछड़ी जनजाति के कार्यक्रम में इन्हे एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत प्राप्त होने वाले अनुदान के अलावा उन्हे अभिकरण मद से भी अतिरिक्त अनुदान स्वीकृत किया जाता है। इस प्रकार उक्त अनुदान की राशि 80 प्रतिशत हो जाती है। और ऋण 20 प्रतिशत तक ही रहता है। योजना के तहत परिवार मूलक आर्थिक कार्यक्रमो को प्राथमिकता प्रदान की जाती है ताकि लोगो की आमदनी मे वृद्धि हो सके तथा वे गरीबी रेखा के ऊपर उठ सके। साक्षरता का प्रतिशत इन समूहो मे कम होने के कारण इस जनजाति समूह के बच्चो को प्राथमिक स्तर से पढ़ाई के प्रति आकर्षित किये जाने के लिए बच्चों को दो जोड़ी पोशाक और पढ़ने की सामग्री नि शुल्क दी जाती है। अबुझमाड़ विकास प्राधिकरण से आदिम जनजाति समूह क्षेत्र मे पीने का साफपानी उपलब्ध कराये जाने के लिए नलकूप पेयजलकूप अभिकरण के मद से निर्मित किये जाते है। इसके अलावा आवश्यक स्वास्थ्य सुविधा की दृष्टि से नि शुल्क दवाईयाँ और आयोडिन युक्त नमक भी दिया जाता है। अबुझमाड़िया जनजाति समूह क्षेत्रों मे जहाँ पर वनो का दोहन हुआ है अथवा अतिरिक्त वनरोपण या बांसरोपण की आवश्यकता है, पशुआहार अथवा रेशमपालन के लिये विशेष आहार का वृक्षारोपण भी अभिकरण के द्वारा किया जाता है।

अबुझमाड़िया जनजाति समूह क्षेत्र मे निस्तारी तालाब मार्ग निर्माण एवं पुराने तालाब की मरम्मत कार्य बच्चो की पढ़ाई के लिये शाला भवन एवं आश्रम शाला का निर्माण, पहुँच मार्ग सड़क-पुलियाँ एवं अन्य निर्माण कार्य अभिकरण के मद उनके योजनाओ एवं कार्यक्रमो का क्रियान्वयन किया जाता है जिसके माध्यम से आदिम जनजाति समूह का शैक्षणिक आर्थिक एवं सामाजिक विकास हो सके। अभिकरणों को अनुदान कृषि, शिक्षा, पशुपालन आदि योजनाओ के लिये दिया जाता है।'

अबुझमाड़िया हेतु कार्यक्रम योजनाः-नारायणपुर जिला के अबुझमाड़ का भौगोलिक क्षेत्र मे चारो ओर वनों से आच्छादित है बीच-बीच मे दुर्गम पहाड़ी स्थल है जहाँ समतल है कुछ जनसंख्या रहती है। शेष स्थल जनसंख्या विहीन है। इस तरह यहा स्थिर खेती की संभावना अवश्य है। यहाँ की खनिज सम्पदा विपुल है। कुछ अंचलों मे बांस के वन है जिसकी खपत मध्यम बड़े उद्योगो मे की जाती है। कुई क्षेत्रो मे आज पर्यन्त भी पैदल और बैलगाड़ी व साइकिल से ही यात्रा संभव है। आज अबुझमाड़ के निवासी खाद्य संग्रह दंवर खेती तथा शिकार पर निर्भर है। क्षेत्र की दुर्गमता के कारण बाहरी सम्पर्क लगभग नगण्य रहा है। इन दिनो प्रशासनिक सेवाओं से जुड़े लोग आने-जाने लगे है। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र इस विकासखण्ड मे एक कोने मे स्थापित है। जनजातियो मे स्थित खेती की ओर रूझान नही है। सीमान्त क्षेत्रों मे रहने वाले परिवार स्थित खेती की ओर मुड़ गये है कृषि का कार्यक्रम बैलों का वितरण, बीज देने तक की सीमित है यदि पशु मर ये तो सब कुछ चौपट हो जाता है। सरकारी भण्डार के माध्यम से खरीद पुरोस्कृत किया जाता है। माड़िया जनजाति के लोग साप्ताहिक बाजारो मे जाना ही पसंद करते है।

विकास प्राधिकरण का उद्देश्यः-आदिवासी विकास प्राधिकरण का उद्देश्य अपने अपने क्षेत्र मे चलाई जा रही है। विभिन्न विकास योजनाओ के कार्यान्वयन की समीक्षा करना विकास कार्यक्रमो मे समन्वय स्थापित करना तथा स्थानीय आकांक्षाओं एव आवश्यकताओ के अनुरूप नये कार्य हाथ मे लेने के लिये प्राथमिकताओ का निर्धारण करना है।

प्राधिकरण का कार्यक्षेत्र आदिवासी विकास प्राधिकरण को निम्नलिखित कार्य इन वर्गो के हित मे करने है-

1. विकास प्राधिकरण अपने क्षेत्राधिकार के अंतर्गत आने वाले आदिवासी क्षेत्र के सर्वांगीण विकास के लिए वित्तीय संसाधनों का ध्यान मे रखते हुए योजना तैयार करना और शासन द्वारा स्वीकृत योजनाओ के क्रियान्वयन की समीक्षा करना और उनके अनुकूलतम उपयोग के लिये विभिन्न शासकीय विभागो को निर्देश एव मार्गदर्शन देना, नई योजनाएँ तैयार करना और उनके क्रियान्वयन के संबंध मे सलाहकार एवं पर्यवेक्षण समीति

2019-2020 Entry No. (2)

International Journal of Applied and Universal Research **E- ISSN No: 2395-0269**
Volume VII, Issue V, Sept-October 2020 Available online at:

ग्रामीण विकासः जनसहभागिता और स्वच्छ भारत अभियान

डॉ0 सखाराम कुंजाम
सहायक प्राध्यापक भूगोल
शास0 स्वामी आत्मानंद स्नातकोत्तर महा0 नारायणपुर (छत्तीसगढ़)

***शोध सारॉंश*—:** भूमण्डलीकरण के दौर में जहॉं एक ओर राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था दुनिया की अर्थव्यवस्था के साथ एकीकृत हो चुकी है, अर्थव्यवस्था के द्वारा दुनिया के देशों क उद्यमियों के खोल दिये गये हैं, भारतीय अर्थव्यवस्था दुनिया की छठवी सबसे बडी अर्थव्यवस्था है, विदेशी मुद्रा भण्डार जो एक समय 3 अरब डॉलर था आज वही 338 अरब डॉलर से अधिक है। वहीं दूसरी ओर गॉंव मे रहने वाली जनसंख्या को उसी के भाग्य पर नही छोडा जा सकता। आज भी भारत में लगभग 70 प्रतिशत जनसंख्या गॉंवों में ही निवास करती है, कृषि क्षेत्र भारत की 50 प्रतिशत आबादी को रोजगार प्रदान करता है, कृषि क्षेत्र की जी डी पी में 14 प्रतिशत हिस्सेदारी है। गॉंवों में आज भी बिजली, पानी, सडक, शौचालय, आवास जैसी मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। अतः ग्रामीण विकास समय की आवश्यकता है। यह विकास जनसहभागिता और स्वच्छ भारत अभियान से भी प्रारम्भ किया जा सकता है।

मुख्य शब्द:— ग्रामीण विकास, जनसहभागिता, स्वच्छ भारत अभियान, भूमण्डलीकरण, आदर्श गांव, सांसद आदर्श ग्राम योजना, बहुआयामी, आधारभूत संरचना।

प्रस्तावना :—
ग्रामीण विकास शब्द का तात्पर्य ग्रामीण क्षेत्रों का समग्र रूप में विकास है, जिसमें ग्रामीण लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार किया जाता है। इस दृष्टि से ग्रामीण विकास एक व्यापक एवं बहुआयामी अवधारणा है, जिसमें कृषि एवं संबन्धित क्रियाकलाप, ग्रामीण उद्योग, सामाजिक आर्थिक आधारभूत संरचना, सामुदायिक सेवाऍं एवं सुविधाऍं तथा मानव संसाधन सम्मिलित हैं। ग्रामीण विकास की अवधारणा को एक प्रक्रिया, एक प्रघटना, एक रणनीति तथा एक अनुशासन के रूप में जाना जा सकता है। ग्रामीण विकास के निम्न लिखित तत्व हैं— अ. जीवन की आधारभूत आवश्यकताऍं: जैसे भोजन, वस्त्र, आवास, प्रारम्भिक साक्षरता, प्राथमिक स्वास्थ्य, जीवन और सम्पत्ति की सुरक्षा आदि। ब. आत्म सम्मान जैसे प्रत्येक व्यक्ति एवं राष्ट्र थोडे बहुत आत्म सम्मान, गौरव व गरिमा को प्राप्त करता है। स. स्वतन्त्रताः जैसे स्वतन्त्रता में राजनीतिक, वैचारिक, आर्थिक तथा सामाजिक सेवाओं की स्वतन्त्रता सम्मिलित है।

ग्रामीण विकास की आवश्यकता :—
भारत सामाजिक जीवन के प्रारम्भिक समय से ही और आज भी ग्रामीण समुदाय की भूमि है और भविष्य में भी रहेगी (सिंह 2009)। भारतवर्ष के सबसे प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद में ग्रामिनी शब्द का उल्लेख है। जिसका आशय ग्राम का मुखिया आदि से है। अतः वैदिक कालीन सभ्यता पूर्णतः ग्रामीण सभ्यता थी। सन् 1901 में यहां 89 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामों मे निवास करती थी, जो 1951 में 83 प्रतिशत, 1971 मे 80 प्रतिशत 2001 में भी 72 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है। सन् 2007 में भारत के सकल घरेलू उत्पादन मे ग्रामीण क्षेत्र का 18 प्रतिशत योगदान था (सिह 2009)। वर्तमान समय में भी ग्रामीण क्षेत्र मे कुल जनसख्या का 69 प्रतिशत भाग निवास करता है (अग्रवाल 2014)। इस समय देश मे लगभग 2 लाख 25 हजार ग्राम पचायतें हैं, लगभग 6 हजार पचायत समितियां/क्षेत्र पंचायतें और 600 से अधिक जिला पचायत हैं। इनमें 30 लाख चुने हुए प्रतिनिधि विभिन्न पदो पर आसीन हैं (महीपाल 2014)। आज भी भारतीय समाज में ग्रामों का उसकी श्रम शक्ति की व उसके विकास की अवहेलना नही की जा सकती। अतः आवश्यकता 69 प्रतिशत भारतीय मानव संसाधन के श्रेष्ठ उपयोग कर ग्रामों के विकास की है। भारतीय मानव शक्ति के महत्व को गॉंधी जी ने भी स्वीकार किया था। उनके अनुसार कोई भी योजना जो केवल कच्चे माल के दोहन की है तथा वह वृहद मानव श्रम शक्ति का नकारती है वह कभी भी मानव समता स्थापित नही कर सकती। वास्तविक योजना तो भारत की मानव शक्ति का श्रेष्ठ उपयोगिता में है (गॉंधी 1964)।

जनसहभागिता और स्वच्छ भारत अभियान —:
स्वतन्त्रता से पूर्व से ही हमारे राष्ट्रीय नेतृत्व ने ग्रामीण पुर्ननिर्माण, ग्रामीण उत्थान तथा ग्रामीण विकास को प्रमुख स्थान दिया। स्वतन्त्रता के पश्चात से ही जमीदारी उन्मूलन, भूदान, ग्रामदान, सहकारिता, श्रमदान, ग्राम पंचायतो की पुर्नस्थापना, गॉंधी ग्राम, अम्बेदकर ग्राम, लोहिया ग्राम, जनेश्वर मिश्र ग्राम योजनायें चलायी गयी/चलाई जा रही हैं। इनमे से कछु योजनाएं ग्रामीण विकास मे अधिकाधिक सहभागिता बढाकर ग्रामीणों द्वारा अपनी आवश्यकताओ को ध्यान मे रखकर स्थानीय ससाधनों का उचित शोधन कर समुदाय का विकास करने के लिए चलायी गयी तो कुछ सरकारी योजना मात्र के रूप में लेकिन इन योजनाओं के बाबजूद भी ग्रामीण विकास की जो आशा की गयी थी वह विकास प्राप्त नही हो सका।

2018-2019 Entry No. (3)

DE GRUYTER Z. Phys. Chem. 2018; aop

Anuushka Pal, Bhawna Arora, Diksha Rani, Sumit Srivastava, Rajeev Gupta and Sameer Sapra*

Fluorescence Quenching of CdTe Quantum Dots with Co (III) Complexes via Electrostatic Assembly Formation

https://doi.org/10.1515/zpch-2018-1138
Received February 1, 2018; accepted March 10, 2018

Abstract: The photoluminescence quenching of CdTe QDs in the presence of three different Co (III)-complexes is studied to elucidate the role of interactions between functional groups of positively charged cysteamine capped CdTe QDs and negatively charged Co (III) complexes bearing carboxylic groups. The steady state and time resolved spectroscopy has been used to investigate the mechanism of quenching. After detailed analysis, it is concluded that quenching is contributed by both static as well as dynamic processes. The static contribution has been assigned to the electrostatic assembly formation via ionic interactions between the amine functional groups of positively charged cysteamine capped CdTe QDs and carboxylic acid groups of negatively charged complexes. The electrostatic interactions were confirmed by zeta potential measurement as well as from effect of salt addition. These studies have implications in designing donor/acceptor pairs having complementary functional groups for efficient optoelectronic devices or photocatalytic systems.

Keywords: charge transfer; energy transfer; fluorescence; FRET; quantum dots; quenching; semiconductor nanocrystals.

1 Introduction

The novel assemblies of QDs is presently an emerging area of research because of applications in diverse areas such as photovolatics, LEDs, biological imaging

***Corresponding author: Sameer Sapra,** Department of Chemistry, Indian Institute of Technology Delhi, Hauz Khas, New Delhi 110016, India, e-mail: sapra@chemistry.iitd.ac.in
Anuushka Pal, Bhawna Arora and Diksha Rani: Department of Chemistry, Indian Institute of Technology Delhi, Hauz Khas, New Delhi 110016, India
Sumit Srivastava and Rajeev Gupta: Department of Chemistry, University of Delhi, Delhi-110007, India

2017-2018 Entry No. (4)

Shodh Drishti (An International Refereed Research Journal), Vol. 8, No. 8, August, 2017 ISSN : 0976-6650

काशीनाथ सिंह की रचनाधर्मिता

विजेत्री विक्रम सिंह*

प्रत्येक रचनाकार की रचनाओं में उसका परिवेश अवश्य परिलक्षित होता है। काशीनाथ सिंह के साहित्य के सन्दर्भ में भी यह बात पूरी तरह सही है। काशीनाथ सिंह का बचपन गाँव में बीता और उसके बाद के जीवन का स्थान बनारस शहर है। काशीनाथ सिंह के व्यक्तित्व और रचना संसार में उनके ग्रामीण और नगरीय परिवेश का प्रभाव निरन्तर दिखाई देता है।

माता जी से सुनी कहानियों का प्रभाव और काशी के साहित्यिक वातावरण ने काशीनाथ सिंह को कहानियाँ लिखने के लिए प्रेरित किया। काशीनाथ सिंह कहानियाँ लिखकर उसे सही करने के लिए नामवर सिंह को दिखाते थे। नामवर सिंह अनुभव को प्रमुखता देते हुए काशीनाथ सिंह की कहानियों की कमियों को उदाहरण के साथ बताते थे। इस सन्दर्भ में काशीनाथ सिंह लिखते हैं– "मैंने कुछ कहानियाँ लिखीं और भाई साहब को दीं। मन में भीतर कहीं लोभ भी था कि कहानियाँ तो उत्तम कोटि की हैं ही शायद कहीं छपवा देना चाहें। सभी सम्पादक इनके मित्र हैं। दिन और हफ्ते गुजर गए। एक ही घर। रात–दिन का मिलना–जुलना। दुनिया भर की बातें हो रही हैं, लेकिन कहानियों के मामले में चुप। मैंने इतना देख लिया था कि ये कहानियाँ मेज से उठकर किसी दिन थोड़ी देर के लिए उनके हाथों में गई थीं।

बहरहाल, चूँकि मैं उन्हें जानता था इसलिए कहानियों पर उनकी राय समझ गया था, फिर भी साहस करके एक दिन पूछा। उन्होंने मुझसे दो सिगरेटें मँगवाई और उनमें से एक पीने को मुझे दी। (जबकि न वे सिगरेट पीते थे और न मैं) 'हुम्' सिगरेट खत्म होने के बाद बोले– 'तुमने एक जगह लिखा है कि 'सिगरेट बुझ गई'। देखा तुमने। बुझती बीड़ी है, सिगरेट नहीं।..... जिस चीज के बारे में नहीं जानते, उसे मत लिखा करो।..... और इधर देखो, और तो पढ़ा नहीं मैंने, लेकिन इस कहानी के ये–ये वाक्य निकाल दिए जाएँ तो कोई हर्ज होगा ?'[1] काशीनाथ सिंह का अपने प्रारम्भिक दिनों में नामवर सिंह के आलोचक रूप को संतुष्ट कर पाना भले ही कठिन होता था पर उनकी टिप्पणियों पर वे विशेष ध्यान देते थे, जिससे उनके लेखन में सुधार होता गया।

नामवर सिंह जब तक काशी में रहे उनका आलोचक रूप किसी न किसी प्रकार काशीनाथ सिंह और उनके साहित्य को प्रभावित करता रहा। नामवर सिंह के दिल्ली जाने के बाद ही काशीनाथ सिंह, नामवर सिंह के प्रभाव से मुक्त हो पाये। इस बात को स्वीकार करते हुए काशी-नाथ सिंह लिखते हैं – "नामवर सिंह के दिल्ली जाने के बाद ही मैं सही अर्थों में स्वतंत्र होने लगा। उनके कारण मेरी जो प्रतिभा बँध गयी थी या उभरकर नहीं आ रही थी, उनके जाने के बाद वह सही अर्थों में प्रस्फुटित हो सकी।"[2]

काशीनाथ सिंह गाँव से उपजे कथाकार हैं। साहित्यिक वातावरण और ग्राम्य प्रभाव के कारण काशीनाथ सिंह ने कहानियाँ लिखना प्रारम्भ किया। साहित्यकार अपने सामाजिक वातावरण से अत्यन्त प्रभावित होता है। रचनाकार का परिवेश उसके साहित्य में अवश्य परिलक्षित होता है। उसके व्यक्तित्व का वैचारिक विकास भी उसकी सामाजिक, सांस्कृतिक सीमाओं के अन्तर्गत ही होता है। काशीनाथ सिंह के कथा साहित्य में हमें सामाजिक–सांस्कृतिक मूल्यों के विविध रूप दिखाई पड़ते हैं। काशीनाथ सिंह लगभग 55 वर्षों से बनारस में रह रहे हैं इसलिए उनके साहित्य में बनारसी संस्कृति अपने विविध रूप में विद्यमान है। बनारसी लोग, बनारसी बोली, खान–पान, बनारसी पान, गली–मुहल्ले आदि से काशीनाथ सिंह अच्छी तरह परिचित हैं। बनारस के विषय में वे लिखते हैं–

"अखंड हरिकीर्तनों का शहर
रात–रात कव्वालियों और बिरहा–दंगलों का शहर !
कंधे पर लंगोट या लंगोट की पगड़ी बाँधे सिर का शहर !
पान की दुकानों के आगे सुबह–शाम गप्पें मारता और ठहाके लगाता शहर!
गलियों और गालियों, घाटों और मालियों, हर हर महादेव के नारों और
तालियों का शहर !
प्राणों से प्यारा शहर
दुनिया में न्यारा शहर

---

* शोध छात्र, हिन्दी विभाग, जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा

2017-2018 Entry No. (5)

Shodh Drishti (An International Peer Reviewed Refereed Research Journal), Vol. 8, No. 8, August, 2017 ISSN : 0976-6650

वर्तमान साहित्य एवं उसका उद्देश्य

विजय लक्ष्मी गौड़*

साहित्य का आदर्श या गन्तव्य क्या है, इस पर संस्कृत साहित्य से ही चर्चा चली आ रही है। "धर्मार्थकाम मोक्षेषु"[1] की बात छोड़ते हुए यदि सिर्फ सहितेन भाव को ही साहित्य का गन्तव्य या आदर्श माना जाय तो मेरी समझ से किसी को आपत्ति न होगी।

उस अदृश्य सर्वशक्तिमान सत्ता ने हम लोगों को ऐसी कोई शारीरिक, आर्थिक, मानसिक, सामाजिक समस्या या आवश्यकता नहीं दी, जिसका समाधान उन्होंने न दिया हो। भूख, प्यास, प्रेम, साँस सबका समाधान पृथ्वी पर सबके लिये उपलब्ध है। ये समाधान उस सत्ता ने सबके लिये समान भाव से दिये थे। मनुष्य की स्वार्थलिप्सा, क्रूरता और एकछत्रता की चाह ने समाज में असन्तुलन पैदा किया और असन्तुलन ने कुछ लोगों को अभाव में जीने के लिये बाध्य किया। इस अभाव ने लोगों के मन में सहृदयता, दुःख और आह उत्पन्न की, इस आह से कविता उत्पन्न हुई–

"वियोगी होगा पहला कवि आह से उपजा होगा गान।
उमड़कर आँखों से चुपचाप बही होगी कविता अनजान।।"[2] (सुमित्रानन्दन पन्त)

यहाँ 'वियोगी' का अर्थ केवल प्रिया या प्रेमपात्र से दूर प्राणी नहीं है, हर रचना समय के अनुसार अपने में अर्थ भरती चलती है। यदि उपर्युक्त पंक्ति में 'वियोगी' शब्द का अर्थ जीवन के लिये आवश्यक सुविधाओं से रहित 'व्यक्ति' लिया जाय तो शायद यह पंक्ति कुछ और अर्थ खोलेगी। सहृदय लोगों ने दूसरों की (जन–मानस) की पीड़ा को संवेदनात्मक ज्ञान एवं ज्ञानात्मक संवेदना द्वारा अभिव्यक्ति दी है। आचार्य शुक्ल के अनुसार– "जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञानदशा कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रसदशा कहलाती है। हृदय की इस मुक्ति की साधना के लिये मनुष्य की वाणी जो शब्द विधान करती आई है, उसे कविता कहते हैं।"[3]

ध्यातव्य है कि 'मनुष्य की वाणी', मनुष्य वह है जो मानवीयता से पूर्ण है, सहृदय है, संवेदनाओं से भरा–पूरा प्राणी है, जो खुश होने पर हँसता है, दुखी होने पर रोता है और मानव मात्र ही नहीं अखिल सृष्टि के प्रति भावमय हो। साहित्य के सन्दर्भ में राइनेर मारिया रिल्के का कथन दृष्टव्य है– ..... "कविता मात्र आवेग नहीं..... अनुभव है। एक अच्छी कविता लिखने के लिए तुम्हें बहुत से नगर और नागरिक और वस्तुएँ देखनी–जाननी चाहिए। ...तुम्हें और भी कुछ चाहिए– इस स्मृति संपदा को भुला देने का बल। इनके लौटने को देखने का अनन्त धीरज..... जानते हुए कि इस बार जब वे आएँगी, तो यादें नहीं होंगी। हमारे ही रक्त, भाव और मुद्रा में घुल चुकी अनाम धपधप होगी। जो अचानक अनूठे शब्दों में फूटकर किसी भी घड़ी बोल देना चाहेगी। अपने–आप....."[4] स्पष्ट है कि कविता रचने के लिए सिर्फ मनुष्य की वाणी का शब्द विधान ही पर्याप्त नहीं है उसमें अनुभूति की व्यापकता और गहराई भी अपेक्षित है। यह गहराई और व्यापकता ही कविता के शब्दों की चयनकर्ता है, जो चयनकर्ता जितना गम्भीर होगा उसकी अभिव्यक्ति एवं संप्रेषणीयता उतनी ही धारदार होगी। यह मानवीयता और अनुभव की गहराई तथा संप्रेषणीयता साहित्य के महत्वपूर्ण उपादान हैं। इन्हीं उपादानों के साये में साहित्य मानव–हित के मार्ग पर अग्रसर रहता है। मीना बुद्धिराजा का कथन दृष्टव्य है– "संपूर्ण साहित्य अंततः मानव मूल्यों को बचाये रखने का ही महत् प्रयास है।"[5]

स्पष्ट है कि मनुष्य को मनुष्य बनाने के लिये साहित्य आवश्यक है। सही मायनों में कहा जाय तो आज जनसंख्या भले बढ़ी हो किन्तु मनुष्यों की संख्या तो निश्चय कम ही हुई है। पहले का मनुष्य जानकार कम, संवेदनशील अधिक था परन्तु आज का मनुष्य जानकार अधिक और संवेदनशील कम है। मनुष्य के तकनीकी ज्ञान ने उसकी मानवीयता का हरण कर लिया है। आज हमारे सामने कोई भी गलत काम होता है तो हमारे मन पर जरा सा भी प्रभाव नहीं पड़ता। कुमार कृष्ण के अनुसार– "आज की सभ्यता हमें जिस गर्त में लिये जा रही है, वहाँ सोचने का भी अवकाश नही रहता कि हम अपनी कौन सी बहुमूल्य चीज निरन्तर खोते चले जा रहे हैं या क्या है जो छीना जा रहा है, हम लोगों से, और हम हैं कि इस महान नुकसान को महसूस नहीं कर पा रहे हैं।"[6] साहित्य सदैव से मनुष्य के लिये प्रासंगिक और आवश्यक रहा है किन्तु मनुष्य की उपर्युक्त स्थिति ने इस प्रासंगिकता और आवश्यकता का ग्राफ तेजी से बढ़ा दिया है। क्योंकि– "कविता मनुष्य के हृदय को स्वार्थ–सम्बन्धों के संकुचित मंडल से ऊपर उठकर लोक सामान्य भावभूमि पर ले जाती है। जहाँ जगत की नाना गतियों के मार्मिक स्वरूप का साक्षात्कार और शुद्ध अनुभूतियों का संचार होता है।"[7] इसी क्रम में आचार्य शुक्ल आगे लिखते है– "भावयोग की सबसे उच्च कक्षा पर पहुँचे हुए मनुष्य का जगत के साथ पूर्ण तादात्य हो जाता है, उनकी अलग भाव सत्ता नहीं रह जाती, उसका हृदय विश्वहृदय हो जाता

* शोध छात्रा (हिन्दी विभाग), लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

2017-2018 Entry No. (6)

त्रिपथगा
Tripathagā - ISSN 2395-4280
An International Refereed Research Journal

IIJ Impact Factor 2.013
Year-III, No-V, Part-II, January-June, 2017
Page No.305-309

कलि–कथा : वाया बाइपास के दर्पण में मारवाड़ी समाज

विजय लक्ष्मी गौड़*

मारवाड़ी समुदाय की विशिष्ट पहचान को रेखांकित करने वाले उपन्यासों में प्रभा खेतान कृत 'पीली आँधी' तथा अलका सरावगी कृत 'कलि–कथा : वाया बाइपास' का महत्त्वपूर्ण स्थान है। ये उपन्यास मारवाड़ी समाज की मनोवृत्ति तथा उसकी विशिष्ट पहचान को इतिहास के माध्यम से पहचानने का प्रयास करते हैं। "कलि–कथा का अर्थ है कलकत्ते की कथा। जैसा कि लेखिका ने उपन्यास में इस बात का उल्लेख किया है कि कलकत्ता शहर जिन तीन गाँवों को मिलाकर बनाया गया था उनमें एक महत्त्वपूर्ण गाँव कलिकाता है।"[1]

उपन्यास के केन्द्र में 'मारवाड़ी समाज' है और मारवाड़ी समाज का इतिहास प्रवासी जीवन से जाकर जुड़ता है। प्रवासी जीवन का इतिहास प्रारम्भ होता है– रोजी–रोटी, स्थान और मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति से। जन्मभूमि छोड़ने के लिए कुछ असामान्य परिस्थितियाँ ही व्यक्ति को विवश करती हैं, यथा–युद्ध, महामारी और आर्थिक विपन्नता। इन सभी कारणों में आर्थिक विपन्नता एक ऐसा महत्त्वपूर्ण कारण है जो व्यक्ति को अपना मूल स्थान छोड़ने के लिए विवश करता है। अन्य कारणों में तो व्यक्ति कुछ समय बाद अपनी जन्मभूमि वापस भी आता है किन्तु आर्थिक विपन्नता के कारण या तो वह लम्बे समय के लिए प्रवासी जीवन व्यतीत करता है अथवा जीवन भर के लिए। उन्नीसवीं शताब्दी में भारत के दो राज्यों– पंजाब और राजस्थान से बहुत अधिक पलायन हुआ। पंजाबी अच्छे भविष्य की आस में भारत के दूसरे राज्यों में जाने लगे। बहुत से पंजाबियों ने तो देश ही छोड़ दिया। राजस्थान का एक क्षेत्र विशेष जिसे मारवाड़ कहा जाता है, वहाँ के मनुष्यों का पलायन बहुत तेजी से हुआ। इस क्षेत्र के जन भारत में जहाँ भी गए, वहाँ वे मारवाड़ी जन के नाम से ही जाने–पहचाने गए; चाहे वे किसी भी जाति और वर्ण के हों।

तत्कालीन समय में व्यावसायिक दृष्टि से सबसे उपयुक्त स्थान कलकत्ता था। "आज कलकत्ता का स्वरूप चाहे जो हो एक ऐसा समय भी था जब वह भारत का सबसे अच्छा शहर माने जाना लगा था। सांस्कृतिक दृष्टि से भी, रोजगारपरक दृष्टि से भी।"[2] इसके अतिरिक्त एक और बड़ा कारण दिल्ली–कलकत्ता के बीच बिछी रेल लाइन भी थी। अतः

*शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

© The Author 2017, Published by South Asia Research & Development Institute, Varanasi
Tripathagā All right reserved for permissions e-mail : tripathaga014@gmail.com

2017-2018 Entry No. (7)

Shodh Drishti (An International Peer Reviewed Refereed Research Journal), Vol. 8, No. 6, July, 2017 ISSN : 0976-6650

साम्प्रदायिकता का तमस : कल आज और कल

विजय लक्ष्मी गौड़*

भीष्म साहनी कालजयी रचनाकार हैं। उन्होंने हिन्दी गद्य की विभिन्न विधाओं को अपनी लेखनी से समृद्ध किया है। 'तमस' उनकी सर्वाधिक चर्चित कृति है। आज भारत ही नहीं पूरे विश्व में फैले और निरंतर बढ़ते साम्प्रदायिक संघर्षो के परिप्रेक्ष्य में उनका कालजयी उपन्यास 'तमस' पुनः हमारे सामने आ खड़ा होता है।काल–विस्तार की दृष्टि से 'तमस' मात्र पाँच दिनो के काल खण्ड में घटित साम्प्रदायिक उन्माद की कहानी है। उल्लेखनीय है कि उपन्यास का वैशिष्ट्य कथा में वर्णित घटनाएँ अथवा व्यक्ति नहीं है, अपितु उन घटनाओं अथवा व्यक्तियों के ताने–बाने से गुँथा वह समन्वित प्रभाव है, जो पाठक को बेचैन कर जाता है, और यही बेचैनी उपन्यास की सर्वोत्तम उपलब्धि है।

साहित्य समाज का व्यापक प्रतिबिम्ब है, किन्तु यह प्रतिबिम्ब तब और अधिक ग्राह्य और स्पष्ट हो जाता है, जब रचना की वस्तु लेखक के निजी जीवन से सम्बद्ध हो। क्योंकि तब साहित्यकार मात्र सर्जक नहीं रहता, वह भोक्ता–सर्जक होता है। अनुभूति की प्रामाणिकता का नुस्खा या नारा साहित्य के क्षेत्र में तो बहुत बाद में आया, जनमानस में तो यह सदियों से व्याप्त था। प्रमाण है–'जाके पाँव न फटी बिवाई, सो का जाने पीर पराई' की जन–व्याप्ति। 'तमस' की विशिष्टता इस सन्दर्भ में भी उल्लेखनीय है। यह उपन्यासकार की कल्पना और सामाजिक यथार्थ के सम्मिलन का उत्पाद्य नहीं है, यह उनके भुक्त अनुभवों तथा तद्जनित संवेदनाओं का साहित्यिक संस्करण है। अपनी आत्मकथा 'आज के अतीत' में वे लिखते हैं –"पर मैंने यह चुप्पी और इस वीरानी का ही अनुभव नहीं किया था। मैनें पेड़ों पर बैठे गिद्ध और चीलों को भी देखा था। आधे आकाश में फैली आग की लपटों की लौ को भी देखा था, गलियों, सड़कों पर भागते कदमो और रोंगटे खड़े कर देने वाली चिल्लाहटों को भी सुना था, और जगह–जगह से उठने वाले धर्मान्ध लोगों के नारे भी सुने थे, चीत्कार सुनी थी।"[1] उपर्युक्त पंक्तियाँ मात्र 'तमस' के अनुभव–जन्य होने का बोध नहीं कराती, यह साम्प्रदायिक वैमनस्य के वीभत्स रूप को उजागर करती हैं; वसुधैव कुटुम्बकम् वाली भारतीय संस्कृति का असली चेहरा सामने रखती है। निर्मला जैन के अनुसार– "तमस' लेखक के वास्तविक और व्यापक अनुभवों की रचनात्मक प्रस्तुति है। लेखक जिस परिवेश और स्थितियों का चित्रण करता है, उनसे उसका निजी और निकट का परिचय रहा है। इसलिए इस उपन्यास में एक आत्मीय और सहज विश्वसनीयता मिलती है।"[2]

यद्यपि मध्यकालीन भारत में भी मुसलमानों का शासन था, संघर्ष तब भी था। किन्तु तब मात्र सत्ता का संघर्ष था, जर–जोरू–जमीन का संघर्ष था, साम्प्रदायिक संघर्ष नहीं था। यह भी उल्लेखनीय है कि सत्ता के लिए होने वाले इस संघर्ष की भी कुछ नीतियाँ थी–यथा–रात्रि के समय युद्ध बन्द रहता, सन्देश वाहक प्रायः निर्भय थे, किन्तु धार्मिक उन्माद के इस संघर्ष में कल से आज तक मात्र हिंसा ही एक नीति है।

'तमस' में समझौते के लिए भेजा गया छोटा ग्रंथी मेहर सिंह मार डाला जाता है। जबकि दोनों पक्षों (हिन्दू सिख और तुर्क) की पैसे दे–लेकर सुलह करने पर सहमति बन चुकी थी। इसके बावजूद जब तुर्कों ने देखा कि उन्हें कुमक मिल गई है और पश्चिम से बलवाई उनका साथ देने आ रहे हैं, तो अकेले मेहर सिंह को जो समझौता दूत बनकर आया था, उसे तुर्कों ने घेरकर मार डाला। "खिड़की में से अब बहुत साफ दिखाई नहीं दे रहा था, लेकिन उन्हें लगा कि कुछ लोग छोटे ग्रन्थी से मिलने आगे बढ़कर आए हैं. . . . . फिर यह भी कि कुछ लाठियाँ उठी हैं, चाँदनी में कोई चीज चमकने भी लगी थी, जो या तो किसी की कुल्हाड़ी थी या छोटे ग्रन्थी की तलवार थी। और शीघ्र ही "अल्लाह–हो–अकबर!" का नारा फिर बुलन्द हुआ।"[3] रामदरश मिश्र 'तमस' के संदर्भ में लिखते हैं–"यह उपन्यास मूलतः राजनीतिक चेतना का उपन्यास है लेकिन यह अपने को राजनीतिक घटनाओं और क्रियाकलापों के विन्यास तक सीमित नहीं करता। यह राजनीति की विसंगतियों से उत्पन्न सामाजिक विभीषिकाओं तक जाता है। यह सामाजिक और धार्मिक सम्बन्धों के टूटने, चरमराने और एक बुनियादी मानवता के लहूलुहान होने के अनुभव तक जाता है।"[4] किन्तु ऐसा भी नहीं है कि 'तमस' मात्र मानवता के लहुलुहान होने की गाथा ही कहता है, यहाँ मानवता के लहुलुहान होने के साथ ही साथ मानवीय मूल्य भी विद्यमान हैं।

'मानवता' जैसा मानवीय मूल्य रमज़ान जैसे क्रूर लोगों पर भी प्रभाव डालता है। हरनाम सिंह को मारने के लिए रमज़ान कुल्हाड़ी उठाता अवश्य है, पर प्रहार नहीं कर पता– "दो तीन बार रमज़ान ने कुल्हाड़ी उठाने की कोशिश की, पर कुल्हाड़ी हाथ में रहते भी वह उसे उठा नहीं पाया। काफिर को मारना और बात है, अपने घर के अन्दर जान–पहचान के पनाह–गज़ीन को मारना दूसरी बात। ....मजहबी जुनून

* शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

2017-2018 Entry No. (8)

ISSN - 2229-3620
UGC APPROVED JOURNAL NO.- 48819

SHODH SANCHAR BULLETIN
Vol. 7, Issue 25 January - March 2017
Page Nos 57-60

AN INTERNATIONAL BI-LINGUAL REFEREED RESEARCH JOURNAL

काशी का अस्सी में व्यक्त नगरीय समाज

विजय लक्ष्मी गौड़*

शोध सारांश

पिछले कुछ समय से नगरों का चरित्र पूरी तरह बदल चुका है। आज के समय में नगरीय समाज अपनी चालाकी, धूर्तता और छल–कपट के लिए जाना जाता है; 'काशी' का नगरीय समाज भी इससे अछूता नहीं है। आदर्श और मानवीय मूल्य किसी भी समाज और संस्कृति की आत्मा होते हैं। भारतीय संस्कृति के मूल में भी सदैव मानवीय मूल्य और आदर्श रहे हैं। नगरीकरण और अन्धी भौतिकता की दौड़ ने इन मानवीय आदर्शों और मूल्यों को सदैव उपभोग और स्वार्थ की दृष्टि से देखा है। आज का नागरिक अपने दुखों से कम और दूसरों के सुखों से अधिक दुखी है, किन्तु 'काशी का अस्सी' में चित्रित पूर्व के 'अस्सी' के समाज के साथ ईर्ष्या और द्वेष वाली बात लागू नहीं होती। 'अस्सी' का समाज अपने में मस्त रहने वाला समाज है, उसे भौतिक संसाधनों की लालसा नहीं के बराबर है। आपके दुख से वह भले दुखी हो ले, आपके सुख से उसे कोई परेशानी नहीं।

'अस्सी' की उपर्युक्त विशेषता के चित्रण के माध्यम से लेखक एक अलग प्रकार के नगरीय समाज की भी कल्पना करता है। किन्तु इसे बिडम्बना कहिए या नगरीकरण की विशेषता–'अस्सी' का उपर्युक्त चरित्र भी धीरे–धीरे बदल जाता है। 'अस्सी' के तुलसी नगर में रूपान्तरण के साथ ही तुलसीनगर के निवासी एक–दूसरे के सुखों से दुखी रहने लगते हैं।

'काशी का अस्सी' काशी के एक मुहल्ले 'अस्सी' को केन्द्र में रखकर लिखा गया उपन्यास है, चूँकि यह 'अस्सी' बनारस नगर के प्रमुख मुहल्लों में से एक है, अतः 'अस्सी' का समाज मुख्य रूप से नगरीय समाज ही कहा जायेगा। 'काशी' भारत का एक प्राचीन नगर है। शोडश महाजनपद के समय भी 'काशी' एक महाजनपद के रूप में स्थित थी। 'काशी' एक धार्मिक नगरी के रूप में जानी जाती है। 'अस्सी' के माध्यम से काशीनाथ सिंह ने भारतीय नगरों के राजनैतिक–धार्मिक तथा सामाजिक पहलुओं को चित्रित किया है। "भारतीय समाज में रूपान्तरण की प्रक्रिया इतनी जटिल और बहुस्तरीय होती है कि इसको क्षेत्रीय एकाग्रता में ही अच्छी तरह से देखा समझा जा सकता है। यह बात हिन्दी में सबसे पहले रेणू ने समझी थी। 'काशी का अस्सी' में भी यही हुआ है। केवल एक मुहल्ला 'अस्सी' होने के कारण यहाँ एकाग्रता और सघन और गहरी है। इसमें होने वाला सामाजिक रूपान्तरण अपने तमाम सरोकारों और जड़ों के साथ इसीलिए इसमें आ पाया है।"[1]

पिछले कुछ समय से नगरों का चरित्र पूरी तरह बदल चुका है। आज के समय में नगरीय समाज अपनी चालाकी, धूर्तता और छल–कपट के लिए जाना जाता है; 'काशी' का नगरीय समाज भी इससे अछूता नहीं है। आदर्श और सिद्धान्त किसी भी समाज और संस्कृति की आत्मा होते हैं। भारतीय संस्कृति के मूल में भी सदैव मानवीय मूल्य और आदर्श रहे हैं। नगरीकरण और अन्धी भौतिकता की दौड़ ने इन मानवीय आदर्शों और मूल्यों को सदैव उपभोग और स्वार्थ की दृष्टि से देखा है। आदर्श के प्रति वर्तमान नगरीय दृष्टिकोण के सन्दर्भ में हरिद्वार का निम्नलिखित कथन उल्लेखनीय है–"आदर्श बाल पोथी की चीज है! वाद–विवाद प्रतियोगिता में भाग लेने और पुरस्कार जीतने की।"[2] कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि नगरीय समाज से आदर्श पूरी तरह समाप्त हो गया है; वहाँ अब भी आदर्श है किन्तु अब ये आदर्श मात्र लोगों को दिखाने के लिए है, समाज की आँखों में धूल झोंकने के लिए है, लोगों को ठगने के लिए है। वास्तव में नगरीय समाज आदर्श ऊँचे रखता है किन्तु उसे जीता निम्न स्तर पर है। उसका सिद्धान्त है– "आदर्श उच्चतम रखो लेकिन जियो निम्नतम।"[3]

आदर्श की तरह सिद्धान्त भी मानवीय मूल्यों में सम्मिलित हैं। किसी भी अच्छे सिद्धान्तों वाले व्यक्ति को समाज में सम्मानित दृष्टि से देखा जाता है। इस सामाजिक प्रवृत्ति को नगरीय समाज अच्छी तरह जानता–समझता है। इसलिए वह आदर्शात्मक सिद्धान्तों को भी मात्र दिखावे के लिए ही सही पर अपनाता चलता है। नगरीय समाज के लिए–"सिद्धान्त सोने का गहना है ! रोज–रोज पहनने की चीज नहीं।"[4] स्पष्ट है नगरीय समाज में आदर्श और सिद्धान्त मात्र प्रदर्शन की ही वस्तु रह गए हैं, जीवन

*शोध छात्रा–हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

Scanned with CamScanner

2017-2018 Entry No. (9)

Naveen Shodh Sansar (An International Refereed/ Peer Review Research Journal) (U.G.C. Jr. No. 64726)
ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Impact Factor - 4.710 (2016) July to Sept. 2017 E-Journal, Vol. III, Issue XIX 614

A Study of Customer Opinion towards Cellular Services With special reference to the Youth of Bilaspur City (C.G.)

Dr. K.L.Tandekar* Shaikh Tasleem Ahmad**

Abstract - This is a research study conducted in a non tribal or normal area named Bilaspur city, which is the second largest city of Chhattisgarh State according to the population as well as the number of cell phone users. Communication sector is one of the most competitive sectors in India, and mobile phones have been included as a basic need in the common men's life. In this study we have tried to know the opinion of the youths of Bilaspur city about their cellular service providers. Only college going youths of a private college of Bilaspur city, had chosen as respondents, on random basis. They were asked the questions related to the experiences of Cell phone services they were using. The researcher had tried to know the customer's reasons behind the selection of service providers, the number of subscribers of different companies, and their percentage also, in a sample of 120 respondents. Reliance Jio, Airtel, Vodafone-Idea and BSNL are the cellular service providers of the research area, and they got the position of First, second, third and last respectively. Data speed, data limit provided by the companies, recharge plans were the determining factors for the decisions of the respondents.

Key words - Communication Sector, Service Provider, Customer's opinion.

Introduction - This is a specified research which is related to the services of cellular companies working in Bilaspur City Municipal corporation area. Bilaspur city is the part of Bilaspur district of Chhattisgarh State, a non tribal or normal area according to revenue records. Bilaspur city is approximately 402 years old and the name of "Bilaspur" is used after the Fisher-woman named "Bilasa". Bilaspur region is encircled by Korea area of Chhattisgarh state in the north, Anuppur locale of Madhya Pradesh in the south, Mungeli and Kabirdham region of Chhattisgarh in the west, newly made Balauda Bazar-Bhatapara district of Chhattisgarh in the south and Korba and Janjgir-Champa districts of Chhattisgarh in the east. The area of the district is 8272 square kilometer. The total population of the district is approximately 2663629 according to census 2011, of which 1351574 were male and 1312055 were female and presently 8 tehsils, 7 blocks and 910 villages are included in Bilaspur district. It is the second-largest city after Raipur City Metro area.

The population of Bilaspur district is 10.43% of State's population, and the density is 322 km2. The literacy rate of the district is 70.78% of which 81.54% males and 59.71% females are literate.

The Chhattisgarh High Court is situated at Bodri town in region Bilaspur which has favored it with the title 'Nyayadhani' (Law Capital) of the state. The Chhattisgarh High Court is the largest High Court of Asia. Bilaspur city is the administrative headquarter of Bilaspur district.

In this research we are trying to analyze & understand the view of young and educated cell phone users of the age group of 17-23 years, and focusing on all the leading service providers who are working our research field. The main companies are Vodafone- Idea (It has converted to VI recently), Reliance Jio, Airtel and BSNL.

Objectives of the Study - Trough this research study we will try to find out the solutions of the questions below

1. To collect Information about service providers and their working period in the research area.
2. To find out the customer's opinions towards their service providers.
3. According to the customer's opinion, rank them on the basis of customer satisfaction.

Sources of Information - Majority of data were collected from primary sources through questionnaire, while some information is used from secondary sources, like website newspapers etc. Area of the research is Bilaspur municipal corporation area. The total population of the district is approximately 2663629 according to census 2011, of which 1351574 were male and 1312055 were female. We have taken 120 respondents from the research area and all the respondents are literate and able to understand the questions, and answer them accordingly.

Limitations of the Study - This study is limited to Bilaspur city municipal corporation area, with special focus to the young cell phone users, who are studying in the different classes of a renowned private college of Bilaspur city. Here

*Research Guide and Principal Govt. Nehru P.G. College, Dongargarh (C.G.) INDIA
** Research Scholar, Pt. Ravisanhankar Shukla University, Raipur (C.G.) INDIA

2017-2018 Entry No. (10)

CRYSTAL GROWTH & DESIGN

Article

pubs.acs.org/crystal

Lanthanide-Based Coordination Polymers for the Size-Selective Detection of Nitroaromatics

Sumit Srivastava,[†] Bipin Kumar Gupta,[‡] and Rajeev Gupta*[,†]

[†]Department of Chemistry, University of Delhi, Delhi-110007, India

[‡]CSIR-National Physical Laboratory, Dr K S Krishnan Road, New Delhi-110012, India

Supporting Information

ABSTRACT: Lanthanide coordination polymers (LnCPs), $[Eu(HL)_3(CH_3OH)_2]_n$ (**1**) and $[Tb(HL)_3(CH_3OH)(H_2O)]_n \cdot H_2O$ (**2**) (H_2L = 3-(picolinamido)benzoic acid)), have been synthesized and characterized. Single crystal analyses of both LnCPs display that HL ligands not only coordinate to Ln ions but also act as the bridge between them generating one-dimensional (1D) chains. Such 1D chains further pack into three-dimensional (3D) architectures by the mediation of H-bonding interactions. Both LnCPs offer strategically placed exposed Lewis basic sites, which potentially interact with the electron-deficient nitroaromatics, whereas H-bonded 3D architecture having hydrophobic channels allows their facile inclusion within the network. A notable feature is the size-dependent sensing of nitroaromatics potentially governed by the packing of 1D chains into a 3D architecture. Both LnCPs act as the fluorescent sensor for quick, sensitive, and selective detection of nitrobenzene not only in solution but also in the vapor phase suggesting potential applications in the sensing devices for the detection of nitroaromatics.

INTRODUCTION

Coordination polymers (CPs)[1−4] are a unique class of materials that have shown wide variety of notable applications.[5−18] Such applications are attributed to their highly crystalline nature, well-defined pores and channels, and the presence of functional sites such as open metal sites, acidic, and basic sites. These features have assisted in developing significant materials for sorption,[5,6] separation,[7] heterogeneous catalysis,[8−14] and sensing[15,16] and recognition[17,18] applications. Among diverse CPs, luminescent coordination polymers offer noteworthy applications in sensing, recognition, and binding events with guests and/or substrates.[15−19] Under this category, the ones based on lanthanide metals, i.e., lanthanide coordination polymers (LnCPs) are particularly interesting materials for their ability to respond to guests and/or substrates in the form of large optical signal.[20,21] LnCP based materials with open metal sites,[22,23] hydrogen bonding (H-bonding) sites,[24,25] and exposed Lewis basic sites[26−29] have been particularly successful for the recognition of small molecules as well as cations.[30−39]

Nitroaromatics are toxic compounds used extensively as the explosives[32−39] and as the starting materials in various industrially and commercially important products such as dyes, pesticides, polyurethane foams, and polymers.[40−43] Nitroaromatics are obstinate to biological treatment and remain in the biosphere, where they constitute a source of pollution due to both toxic and mutagenic effects on microorganisms, aquatic and other organisms, as well as humans.[44−49] Exposure of nitroaromatics to humans, particularly the volatile ones, can cause serious health hazards such as cancer, liver damage, and kidney failure.[44−49] Therefore, detection of nitroaromatics is a compelling requirement not only due to their explosive qualities but also due to their environmental hazardous impact.[39−49] Although nitroaromatics exhibit strong UV absorption, their low fluorescence render their direct detection impractical.[32−39] Such a problem necessitates the use of an alternate strategy, and therefore, several sensors have been developed for the detection of nitroaromatics.[23−59] In this context, electron-rich sensors have been particularly notable considering the electron-deficient nature of nitroaromatics.[15−21,24−39] In this work, we present

Received: April 15, 2017
Revised: May 27, 2017
Published: June 5, 2017

ACS Publications © 2017 American Chemical Society

DOI: 10.1021/acs.cgd.7b00536
Cryst. Growth Des. 2017, 17, 3907−3916

2017-2018 Entry No. (11)

International Journal of Applied and Universal Research
Volume IV, Issue II, March-April. 2017 Available online at:

E-ISSN No: 239

विकास कार्यक्रमों का जनजातीय जीवन पर प्रभाव नारायणपुर (अबुझमाड़) (छत्तीसगढ़) के विशेष संदर्भ में

सखाराम कुंजाम
सहायक प्राध्यापक भूगोल
शास0 स्वामी आत्मानंद स्नातकोत्तर महा0 नारायणपुर (छत्तीसगढ)

शोध सारांश–

प्रस्तुत शोध छत्तीसगढ़ प्रदेश के बस्तर जिले के बीहड़ जंगल, प्रकृति की अमूल्य निधि प्राकृतिक सम्पदा है। वास्तव में विकास एक सतत प्रक्रिया है। परिवर्तन विकास का सूचक है। विकास का सामान्य अर्थ बहुधा उच्चतर उपभोग और जीवन की अच्छी गुणवत्ता लगाया जाता है। अतः स्पष्ट है कि अधिक उपभोग को अपने आप में विकास का एक मात्र उद्देश्य स्वीकार नहीं किया जा सकता है। सामाजिक जीवन में प्रत्येक व्यक्ति की कुछ आधारभूत भौतिक आवश्यकताएँ होती हैं। उस सीमा तक उपभोग मानवीय प्रयास का एक आधारभूत लक्ष्य बन जाता है। पर्याप्त सन्तुलित भोजन, न्यूनतम वस्त्र हवा पानी से बचने के लिए सुखद आगम शरीर संरक्षण के लिए अनिवार्य है। अबूझमाड़िया लगभग बिना कपड़ों के ही रहते हैं। कम कपड़े पहनना गरीबी का द्योतक नहीं है। वह उनकी नैसर्गिक स्थिति में जीवन यापन का तौर तरीका मात्र है। वहां पर यदि किसी बालिका को वक्षस्थल को ढकने के लिए वस्त्र पहनने के लिए कहा जाय तो वह शरमाती है और उसे अटपटा लगता है। उसके परिजन परिहास में कहने लगते हैं कि ये तो 'लालपटी' (मैदानी इलाका) की हो गयी है। आदिवासी विकास एक औपचारिक कार्य सूची न होकर एक अवधारणा के रूप में परिभाषित होना चाहिए। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें अन्तिम लक्ष्य को सतत रूप से परिभाषित करने की आवश्यकता है। साथ ही उसके सन्दर्भ में कार्य नीति निर्धारित करते रहना आवश्यक हो जाता है। यहाँ प्रत्येक कार्य की एक ही कसौटी हो सकती है– कि क्या प्रस्तावित प्रावधान आदिवासी समाज के हित में है अथवा उनके कल्याण के लिए द्योतक है जो हित में नहीं त्याज्य है, चाहे औपचारिक व्यवस्था कितनी ही मान्य वा विधि–नियम सम्मत क्यों न हो प्रत्येक आदिवासी समुदाय के लिए उनकी सामाजिक आर्थिक स्थिति, संसाधनों की सम्भाव्यता तथा अन्य वर्गों के सम्पर्क की प्रकृति एवं अनन्य सन्दर्भ–विन्दु संकुल का निर्धारण करते हैं। इसलिए प्रत्येक मामले में विकास की गति और उसकी दिशा अलग से परिभाषित की जाना आवश्यक है। आदिवासी क्षेत्रों की परम्परागत व्यवस्था को न केवल अर्थहीन न मान लिया जाए बल्कि उसे नयी व्यवस्था की परिभाषा, स्वरूप और संचालन में एक मत स्वपूर्ण तथ्य के रूप में स्वीकार किया जाय। इसी परिपेक्ष्य में शासन द्वारा संचालित विकास कार्यक्रमों का जनजातीय जीवन पर प्रभाव का मूल्यांकन समाचीन है। जिला नारायणपुर जो बस्तर का अभिन्न अंग है, जिसे सन् 2007 में जिला का दर्जा प्राप्त हुआ है। नारायणपुर में ओरछा विकाखण्ड में 'अबूझमाड़' विशेष आकर्षण का केन्द्र है। जहाँ प्रकृति के प्रति आस्था को संजोये हुए जंगली जनजातियों बीहड़ जंगल में निवास करती हैं। ये प्रकृति की गोद में जंगली जानवरों की भांति फि हुए दिखाई पड़ते हैं। इनमें आधुनिक वैज्ञानिक– का प्रभाव बिलकुल नहीं है।

मुख्य शब्द :- प्राकृतिक सम्पदा, आदिवासी विकास नारायणपुर (अबुझमाड़) छत्तीसगढ।

परिचयः

वास्तव में विकास एक सतत प्रक्रिया है। परिवर्तन सूचक है। विकास का सामान्य अर्थ बहुधा उच्चत और जीवन की अच्छी गुणवत्ता लगाया जाता है। है कि अधिक उपभोग को अपने आप में विकास का उद्देश्य स्वीकार नहीं किया जा सकता है। सामाजि में प्रत्येक व्यक्ति की कुछ आधारभूत भौतिक आ होती हैं। उस सीमा तक उपभोग मानवीय प्रयास आधारभूत लक्ष्य बन जाता है। पर्याप्त सन्तुलि न्यूनतम वस्त्र हवा पानी से बचने के लिए सुखद अ संरक्षण के लिए अनिवार्य है। अबूझमाड़िया लग कपडों के ही रहते हैं। कम कपड़े पहनना गरीबी नहीं है। वह उनकी नैसर्गिक स्थिति में जीवन याप तरीका मात्र है। वहां पर यदि किसी बालिका को को ढकने के लिए वस्त्र पहनने के लिए कहा जा शरमाती है और उसे अटपटा लगता है। उसक परिहास में कहने लगते हैं कि ये तो 'लालपटी' इलाका) की हो गयी है।[1]

आदिवासी विकास एक औपचारिक कार्य सूची न अवधारणा के रूप में परिभाषित होना चाहिए। यह क्षेत्र है जिसमें अन्तिम लक्ष्य को सतत रूप से करने की आवश्यकता है। साथ ही उसके सन्दर्भ नीति निर्धारित करते रहना आवश्यक हो जाता प्रत्येक कार्य की एक ही कसौटी हो सकती है- प्रस्तावित प्रावधान आदिवासी समाज के हित में उनके कल्याण के लिए द्योतक है जो हित में नहीं चाहे औपचारिक व्यवस्था कितनी ही मान्य वा वि सम्मत क्यों न हो प्रत्येक आदिवासी समुदाय के लि सामाजिक आर्थिक स्थिति, संसाधनों की सम्भाव्यता वर्गों के सम्पर्क की प्रकृति एवं अनन्य सन्दर्भ–विन्दु निर्धारण करते हैं। इसलिए प्रत्येक मामले में विकास और उसकी दिशा अलग से परिभाषित की जाना है। आदिवासी क्षेत्रों की परम्परागत व्यवस्था को अर्थहीन न मान लिया जाए बल्कि उसे नयी व परिभाषा, स्वरूप और संचालन में एक मत स्वपूर्ण रूप में स्वीकार किया जाय। इसी परिपेक्ष्य में शा

2016-2017 Entry No. (12)

'अपना मोर्चा' का भाषागत वैशिष्ट्य

– विजेन्द्री विक्रम सिंह

'अपना मोर्चा' उपन्यास की भाशा पात्रानुकूल, सम्प्रेषणीय, वातावरण निर्माण में सक्षम एवं देशज ठाठ से युक्त है। चूँकि विवेच्य उपन्यास मुख्यतः १९६७ ई. के भाषा आन्दोलन से प्रेरित है इसलिए इस उपन्यास में काशीनाथ सिंह की भाषा सम्बन्धी विशेष दृष्टि उभरकर आई है। काशीनाथ सिंह मात्र देशी भाषाओं से परिचित नहीं हैं, कहने का तात्पर्य यह है कि वे मात्र शब्दों की भाषा नहीं जानते बल्कि वे जीवन और भाव की भाषा को अधिक समीपता से जानते हैं। एक साहित्यकार सामान्य मनुष्य की अपेक्षा अधिक संवेदनशील होता है। वह जीवन की भावनात्मक आवश्यकताओं को अधिक गहराई के साथ अनुभव करता है। भाव की भाषा शाब्दिक भाषा से अधिक प्रभावशाली होती है। इसी जीवन और भाव की भाषा के ग्रहण पर जोर देने का अचूक प्रयास है 'अपना मोर्चा'। काशीनाथ सिंह लिखते हैं-'आप कहते हैं-भाषा? भाषा मेरे लिए वह नहीं है जो आपके लिए है। हमारे पिछले अनुभव मुझे यह कहने के लिए बाध्य करते हैं कि भाषा का अर्थ 'हिन्दी' या 'अंग्रेजी' नहीं है। भाषा का अर्थ जीने की पद्धति, जीने का ढंग। भाषा यानी जनतंत्र की भाषा, जनतान्त्रिक अधिकारों की भाषा, आजादी और सुखी जिन्दगी के हक की भाषा। हम जीने के इस तौर तरीके के लिए लड़ रहे हैं।'[1]

काशीनाथ सिंह ने विवेच्य उपन्यास में 'भाषा' को मात्र 'भाषा' के रूप में न देखकर भाव और संस्कृति के रूप में देखा है। भाषा संस्कृति की आत्मा होती है। भाषा के बल पर हम किसी भी संस्कृति की मूल प्रवृत्ति को समझ सकते हैं। निर्मल वर्मा लिखते हैं-'भाषा की इन दीवारों के भीतर ही कोई संस्कृति अपनी निजी पहचान भी अर्जित करती है। मानवीय भाषाओं में एक तरह का स्थैर्य और स्थायित्व रहता है, जिसके फलस्वरूप ही मनुष्य को अपनी पहचान और अस्मिता गढ़ने का अवकाश मिल पाता है।'[2]

काशीनाथ सिंह के भाषा संबंधी विचार विवेच्य उपन्यास के प्रमुख पात्र ज्वान की सोच के माध्यम से भी अभिव्यक्त हुए हैं-'ज्वान का होना अंतर्विरोधों से व्यक्त होने वाले व्यंग्य की तीक्ष्णता में सहायक है। 'ज्वान' चीजों को हमेशा एक द्वन्द्व-न्याय से देखते हैं। इससे भाषा में एक नया व्यंग्यात्मक तनाव पैदा होता है। 'बबुआ' और 'बबुई' के प्रति उनके भदेस संबोधनों में जो व्यंग्य है वह आक्रामक भी है और सहानुभूति प्रेरित भी। भाषा की यह अंतर्निहित ताकत आशय से, अभिप्रेत से पहचानी जाती है।'[3] व्यंग्यात्मकता और भदेसपन काशीनाथ सिंह की भाषा का मुख्य गुण है। अपना मोर्चा की भाषा में ये गुण अधिकांशतः ज्वान के कथनों और संवादों में अभिव्यक्त हुआ है। यथा-'ज्वान लाठी पीट रहे हैं और अपनी भाषा के बारे में सोच रहे हैं-फसलों की भाषा, जिन्दा रहने की भाषा। हे बबुआ ! अगर तुम्हें हमारी भाषा को अपनी लातों से रौंदना ही है तो तुम अंग्रेजी बोलो या हिन्दी, हमारे लिए दोनो बराबर है। तुम साम्राज्यवाद की भाषा से नफरत करो, यह तो समझ में आता है लेकिन हम तो यह देखेंगे कि तुम हमारी भाषा से क्या करते हो? क्या करते हो मेरी भाषा से?'[4] 'भाषा' और 'आदमी' के सम्बन्ध

2016-2017 Entry No. (13)

हिन्दी

ISSN - 2229-3620

SHODH SANCHAR BULLETIN
Vol. 6, Issue 23 Oct. - Dec. 2016
Page Nos. 75-78

BI-LINGUAL INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL

क्याप : एक असफल प्रेम कथा

विजय लक्ष्मी गौड़*

शोध सारांश

'क्याप' एक असफल प्रेमकथा है और इस प्रेम की असफलता का मुख्य कारण है– नायक में जोखिम उठाने की अक्षमता। इस मुख्य कारण का एक सहयोगी कारण है– नायक का कभी न हो सकने वाली क्रान्ति के प्रति अत्यधिक आशान्वित होना। 'क्याप' में नायक का प्रेमी रूप कम तथा प्रतिबद्ध क्रांतिकारी का रूप अधिक मुखरित हुआ है। प्रेम एक साहस है, संकल्प है, जोखिम है और इस जोखिम को उठाने का साहस रमुआ में नहीं है। इसीलिए वह असफल और आतंकित है। अंग्रेजों ने भारतीय सभ्यता, संस्कृति, संसाधन और नारी का किस प्रकार शोषण किया इसकी एक झलक 'क्याप' प्रस्तुत करता है। भारतीयों के प्रकृति प्रेमी होने का प्रमाण भी है 'क्याप'। 'क्याप' मात्र कस्तूरीकोट के फस्कियाधार वासियों का विकासात्मक इतिहास नहीं है, यह कई दृष्टियों यथा समाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक और प्राकृतिक दृष्टि से सम्पूर्ण भारत का विकासात्मक इतिहास है।

क्याप अर्थात 'अजीब', 'बेमतलब', 'अनगढ़'– यह विशेषण उपन्यास के न होकर किसी भी विचारवाद के अतिवाद के लिए है। उल्लेखनीय है कि उत्तर आधुनिक किसी भी विचारवाद से ग्रसित नही है उसकी तुलना भारतीय काव्यशास्त्र के औचित्य सम्प्रदाय से की जा सकती है।

आलोच्य उपन्यास के तीन प्रमुख आलोचनात्मक तथा विकासात्मक बिंदु हैं, प्रथम पराधीन भारत में ब्रिटिश शासकों द्वारा भारत के शोषण के तरीके; द्वितीय– कथानायक और उत्तरा का असफल प्रेम; तीसरा किसी भी विचारवाद से क्रांति की संभावनाओं का अंत।

सुविधा एवं आर्थिक विकास के नाम पर भारत में औपनिवेशिक शक्तियों द्वारा प्राकृतिक साधनों और सम्पत्ति का दोहन किया गया। उपन्यास का घटना स्थल वर्तमान 'वाल्मीकि नगर' का फस्कियाधार क्षेत्र है। उपन्यास के कालखण्ड में इस दोहन का माध्यम बनता है– हैरीसन। दोहन की प्रक्रिया आरम्भ होने के पूर्व फस्कियाधार का अपना ही आकर्षण था। बाह्य विजेताओं के लिए यहाँ के प्रमुख आकर्षण थे– मृग, शिलाजीत, यहाँ की स्त्रियों का सौन्दर्य, पांग्याण देवी और स्थानिक लोगों की कल्पनाशीलता। बाह्य विजेताओं के आने के पूर्व फस्कियाधार निवासी कस्तूरी मृग को पूज्य समझते थे। कोई मृग स्वयं ही मर जाए तो वे अवश्य कस्तूरी निकाल लेते थे। किन्तु बाह्य विजेताओं ने अपने स्थानिक नुमाइन्दों को भाले से मृग मारना सिखाया। फस्कियाधार अपनी दुर्गमता के कारण फिरंगियों का स्थायी निवास न बन सका। स्त्रियों की कामोत्तेजक रूप राशि, शिलाजीत और यहाँ की पाषाण देवी उर्फ पांग्याण देवी ने उन्हें बाँधे रखा। "यही कारण है कि उन्होंने इस देवी मन्दिर के प्रांगण में श्रावण पूर्णिमा के आसपास लगने वाले मेले को अपना बना लिया। इस तरह साल में कम से कम एक बार यहाँ आकर वह अपने विजेता होने का अहसास करा सकें, कस्तूरी और शिलाजीत खरीदकर ले जा सके, स्थानिक सुन्दरियों से बलात्कार कर सकें और पाषाण देवी से अपने विकास और शत्रु के विनाश के लिए प्रार्थना कर सकें।"[1]

समग्रतः यह कहा जा सकता है कि विजेताओं ने उपर्युक्त वर्णित पाँचों आकर्षणों के समन्वित दोहन में कोई कोर कसर नही छोड़ी। कथाकार ने स्वयं लिखा है कि "इस तथ्य से इनकार नही किया जा सकता कि कस्तूरी मृगों का सफाया हो जाने के बाद हम लोगों की रोजी–रोटी दूसरों को दिलचस्प गप्पे सुनाकर ही चलती रही। पहले इन गप्पों से हम अपना ही मनोरंजन करते आए थे, फिर आजीविका की खातिर बाहर वालों का भी करने लगे। इन गप्पों के सहारे हम आत्महत्या के लिए प्रेरित करती हुई अपनी विषम स्थितियों को अपने लिए जीवनदायिनी बना पाते थे।"[2]

फिरंगियों ने हमारा दोहरा शोषण किया। प्रथम तो धर्म परिवर्तन कर हमें सांस्कृतिक विस्मृति की सौगात दी; दूसरे हमारे प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया। भारत अंग्रेजों का सांस्कृतिक उपनिवेश भी रहा। 1842 के अफगान युद्ध में हुई

*शोध छात्रा-हिन्दी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

2016-2017 Entry No. (14)

ChemPubSoc Europe

DOI: 10.1002/slct.201601393

ChemistrySELECT Full Papers

Organic & Supramolecular Chemistry

Cobalt Complexes Offering Aryldicarboxylic Acid Groups: Hydrogen Bonding Assemblies and the Resultant Topologies

Sumit Srivastava and Rajeev Gupta*[a]

This work reports synthesis of *tris*-chelated Co^{3+} complexes, either having *mer* or *fac* geometries, and *bis*-chelated Co^{3+} complexes containing appended aryldicarboxylic acid groups. The *tris*-chelated complexes offer six appended –COOH groups while *bis*-chelated complexes provide eight –COOH groups. Both *tris*- and *bis*-chelated complexes participate in *intermolecular* hydrogen bonding to generate complicated yet interesting self-assembled architectures that has been simplified by the topological analyses. We evaluate the effect of *tris*- versus *bis*-chelated complexes; *mer* versus *fac* geometrical forms; lattice solvent molecules; and cations on the hydrogen bonding based self-assemblies.

Introduction

Hydrogen bonding (H-bonding)[1] plays an indispensable role in molecular recognition,[2] self-assembly,[3] and crystal engineering.[4] The potential of a hydrogen bond (H-bond) as a viable design element in the construction of extended architectures and therefore novel materials has been adequately rationalized in many fields.[3–4] However, despite outstanding progress in understanding the hydrogen bonded (H-bonded) self-assemblies; predicting a H-bonded structure beforehand remains a great challenge.[5]

A carboxylic acid is an interesting functional group for evaluating its role in H-bonding as it simultaneously offers both H-bond donor via its *–OH* part and H-bond acceptor due to its *C=O* unit.[1c,5d,6] As a result, assorted organic molecules bearing carboxylic acid group(s) have been used for evaluating their H-bonding based self-assemblies.[6d–g] H-bonding interactions between such complementary functional groups being offered from a molecule has resulted in the generation of different types of architectures such as chains,[7] sheets,[6c] and polymers[8] in addition to cyclic dimers, trimers, and other polygons.[9] Attempts have also been made to incorporate carboxylic acid group(s) on a coordination complex.[10] In doing so, metal's geometry potentially controls the orientation of the appended carboxylic acid group(s) and generate unprecedented H-bonded self-assemblies.[10]

Our research group has introduced various H-bonding sensitive functional groups on a coordination complex to evaluate their role in the H-bonding based self-assembly.[11] Our earlier coordination complexes offering appended phenol and catechol groups provided highly symmetrical and complementary H-bonded networks where position of the –OH group on an arene ring was the predominant structural directing factor.[11ab] On the other hand, coordination complexes appended with arylcarboxylic acid groups not only allowed us to evaluate the effect of –COOH position on an arene ring but also the influence of associated cation on the H-bonded assemblies (Scheme 1).[11c] In extension of our earlier work on H-bonded self-assemblies of Co^{3+} complexes appended with arylcarboxylic acid groups;[11d] herein, we report Co^{3+} complexes providing aryldicarboxylic acid groups. These complexes offer six to eight carboxylic acid groups in a single molecule and generate complicated yet interesting H-bonded self-assemblies. In all cases, the resultant H-bonding assemblies have been studied using topological simplification approach. We evaluate the effect of *tris*- versus *bis*-chelated complexes; *mer* versus *fac* geometrical forms; lattice solvent molecules; and cations on the H-bonding based self-assemblies.

Results and Discussion

This work presents two categories of Co^{3+} complexes: *tris*-chelated complexes **1** and **2** appended with ester groups and their deprotected complexes **3-5** with free carboxylic acid groups; and *bis*-chelated complexes **6** and **7** appended with esters and their deprotected complexes **8-10** with free carboxylic acid groups. Synthetic sequence involved reaction of the respective deprotonated ligand with Co^{2+} salt followed by oxygen led oxidation in all cases (Schemes 2 and 3). Notably, *mer* isomer **1** was isolated exclusively at 20 °C whereas use of 50 °C led to the exclusive formation of *fac* isomer **2**. Further, base-assisted hydrolysis of protected complexes produced the corresponding complexes with free carboxylic acid groups (Schemes 2 and 3). Interestingly, such a hydrolysis followed by neutralization, however, maintaining *pH* between 9-9.5 pro-

[a] S. Srivastava, Prof. R. Gupta
Department of Chemistry
University of Delhi
Delhi-110007, India
Phone: + 91-11-27666646
E-mail: rgupta@chemistry.du.ac.in
Homepage: http://people.du.ac.in/~rgupta/

Supporting information for this article is available on the WWW under http://dx.doi.org/10.1002/slct.201601393

© 2016 Wiley-VCH Verlag GmbH & Co. KGaA, Weinheim

2016-2017 Entry No. (15)

CRYSTAL GROWTH & DESIGN

Article

pubs.acs.org/crystal

A Carboxylate-Rich Metalloligand and Its Heterometallic Coordination Polymers: Syntheses, Structures, Topologies, and Heterogeneous Catalysis

Sumit Srivastava, Vijay Kumar, and Rajeev Gupta*

Department of Chemistry, University of Delhi, Delhi 110 007, India

Supporting Information

ABSTRACT: This work reports three heterometallic coordination polymers (HCPs), namely, $[\{(\mathbf{1}')_2Zn_8Na_2(H_2O)_{21}\}\cdot 20H_2O]_n$ (**2**), $[\{(\mathbf{1}')(\mathbf{1}'')Cd_6(H_2O)_{21}\}\cdot 32H_2O]_n$ (**3**), and $[\{(\mathbf{1}')_2Mn_8Na_2(H_2O)_{27}\}\cdot 3H_2O]_n$ (**4**), originated from a common Co^{2+} based metalloligand **1** offering eight arylcarboxylic acid groups where **1**′ and **1**″ respectively contribute eight and six anionic carboxylate groups. The crystal structure analyses display three-dimensional nature of all three HCPs wherein metalloligands are connected through secondary metals. Detailed topological analyses illustrate that the metalloligands function as the nodes that are connected to secondary building units (SBUs) composed of Zn^{2+}, Cd^{2+}, and Mn^{2+} ions coordinated by the arylcarboxylate groups. All three HCPs effectively function as the heterogeneous catalysts for the Lewis acid assisted Knoevenagel condensation reactions of assorted aldehydes with three different active methylene compounds.

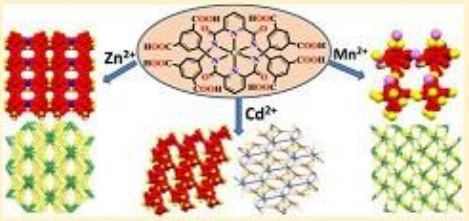

INTRODUCTION

Crystalline coordination polymers constitute an important class of materials due to their interesting architectures[1−10] and significant structure-based applications in sorption,[11,12] separation,[13,14] sensing,[15−17] ion-exchange and transport,[18,19] proton conduction,[20−22] optics,[23−27] magnetic materials,[28,29] devices,[30,31] and catalysis.[32−36] In particular, their utilization as the heterogeneous catalysts in assorted organic transformation reactions has often resulted due to their crystalline nature and therefore orderly arrangement of the catalytic centers and their unique ability to support the facile diffusion of substrates and reagents, a feature reminiscent of zeolites.[32−40] While the literature presents numerous homometallic coordination polymers, heterometallic coordination polymers incorporating two different metals are comparatively fewer.[41−44] Such a stark difference between two categories is due to the synthetic difficulty in placing two different metals in close proximity. Although judiciously selected ligands, offering two different coordination environments suitable to satisfy the geometrical and/or electronic requirement of two different metals, have been successfully used for the construction of heterometallic coordination polymers (HCPs),[45−53] such examples are limited due to cumbersome syntheses.[49,50,53] In this context, a well-defined metalloligand,[1] already having a primary metal ion but offering additional coordination-sensitive functional groups to potentially ligate a secondary metal ion, offers much better prospects for the construction of HCPs.

Our research group has reported various metalloligands offering assorted appended functional groups ranging from hydrogen bonding (H-bonding) sensitive groups[54−56] to coordination-bonding sensitive groups.[57−72] We have illustrated the effect of number, position, and orientation of such appended functional groups, being offered from a metalloligand, on the material design. Using diversified metalloligands, we have been able to showcase examples of hydrogen bonded assemblies,[54−56] discrete trimetallic complexes,[57−61] and two- (2D) and three-dimensional (3D) heterobimetallic coordination polymers.[62−72] These examples adequately illustrate the significance of the metalloligand concept for the construction of ordered architectures.

Out of assorted metalloligands, the ones offering appended arylcarboxylic acid groups (ML^1 and ML^2) were successfully utilized for the synthesis of moderately porous crystalline HCPs with noteworthy heterogeneous catalytic applications (Scheme 1).[69−72] As a logical extension, we became interested to incorporate aryldicarboxylic acid functional groups and evaluate

Scheme 1. Our Earlier Metalloligands (ML^1 and ML^2) and the Carboxylate-Rich Metalloligand 1 Used in the Present Work

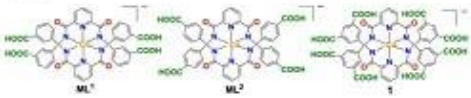

Received: February 2, 2016
Revised: March 28, 2016
Published: March 30, 2016

ACS Publications © 2016 American Chemical Society

DOI: 10.1021/acs.cgd.6b00176
Cryst. Growth Des. 2016, 16, 2874−2886

2016-2017 Entry No. (16)

CrystEngComm

HIGHLIGHT

View Article Online
View Journal | View Issue

Published on 01 November 2016. Downloaded by University of Delhi on 06/12/2016 06:50:54.

CrossMark

Cite this: CrystEngComm, 2016, 18, 9185

Metalloligands to material: design strategies and network topologies

Sumit Srivastava and Rajeev Gupta*

Received 27th August 2016,
Accepted 1st November 2016

DOI: 10.1039/c6ce01869f

www.rsc.org/crystengcomm

This highlighted article discusses the design strategies involving the use of metalloligands as molecular building blocks for the construction of supramolecular architectures. In a coordination-driven approach, metalloligands are connected via the mediation of secondary metal ions to produce 1D, 2D, and 3D architectures. However, the metalloligands offering hydrogen-bonding-sensitive functional groups participate in the assembly of multi-dimensional networks purely manifested by the weaker yet directional intermolecular hydrogen bonds. Attempts have been made to generalize the design concept by invoking network topologies.

Introduction

Designer architectures are significant materials, which not only offer magnificent structures but also noteworthy applications.[1,2] Metal–organic frameworks (MOFs), coordination networks (CNs), and coordination polymers (CPs), all having nearly identical meanings, come under the umbrella of designer architectures. Such architectures offer versatile applications in sorption,[3] separation,[4,5] sensing,[6–8] ion-exchange and transport,[9,10] proton and hydroxide conduction,[11,12] luminescent materials and devices,[13,14] optics,[15,16] magnetism,[17] and catalysis.[18–21] Such applications are often related to the crystalline framework; therefore, the regularity of molecular units, stability and robustness of the architectures, and high porosity offered by such architectures.[3–21]

There are several ways in which such architectures could be constructed. The simplest one is to mix a suitable organic ligand with a suitable metal salt.[22–24] This method is not only the easiest, but has produced a large number of MOFs, CNs, and CPs. On the other hand, one can envision the construction of a MOF or a CP in a step-wise manner and probably in a more systematic fashion. This is where a well-defined molecular building block plays an important role.[1] Now, the question one may ask: which of the two methods is better and why? Well, there is no exact answer and there are both pros and cons for both the methods. While mixing of a metal and a ligand, without a doubt, is synthetically the most successful method, it relies mostly on serendipity and

Department of Chemistry, University of Delhi, Delhi – 110 007, India. E-mail: rgupta@chemistry.du.ac.in; Web: http://people.du.ac.in/~rgupta/; Tel: +91 11 27666646

Sumit Srivastava

Sumit Srivastava was born (1985) in Unnao, Uttar Pradesh, India. He obtained his MSc in Chemistry from D. A. V. College (CSJM University, Kanpur) in 2009. He has recently submitted his PhD thesis under the supervision of Prof. Rajeev Gupta in the Department of Chemistry, University of Delhi. His research interests include the design of hydrogen bonding and coordination-bonding-based self-assemblies and evaluating their topologies, as well as developing homogeneous and heterogeneous catalysts.

Rajeev Gupta

Rajeev Gupta obtained his PhD from IIT Kanpur (India) and did his Postdoctoral work at the University of Kansas (USA). He joined the University of Delhi in 2003 and has been working as a Professor since 2009. His research group works on several aspects of coordination and supramolecular chemistry with emphasis on designer materials, sensing, energy-transfer, and catalysis. His research is well-supported by the generous funding from DST, SERB, CSIR, DST-PURSE, and UGC. More details about Rajeev Gupta's research work can be found on his website: http://people.du.ac.in/~rgupta/.

2016-2017 Entry No. (17)

Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : **Commerce**
Research Link - 143, Vol - XIV (12), February - 2016, Page No. 120-121
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

FII and FDI in Indian Economy

FDI & FII play a vital role in the Indian Economy. Although several group of politician and intellectuals continuously opposing FII &FDI in India, but there are many favorable impacts in economic growth of our nation. That's why the central governments of India simplify the rules & regulations time to time, for attracting more foreign funds through FII & FDI. It is very important to observe carefully the requirements, status, opportunities & challenges of Indian Economy when making Decisions related to FII & FDI.

SHAIKH TASLEEM AHMAD

Introduction :

FII & FDI are the well known words for business related areas, and for a common learned persons also. These two words usually take place in almost newspapers. Obviously they arises some questions in readers mind. FDI in retail sector is one of the controversial matter in last few years, but in age of liberalization and Globalization it is not possible for Indian policymakers to escape from FII & FDI for a long time, and these are also required for our national economical growth. In this paper all relevant questions are being tried to exercised, and tried to avail the informations in a maximum possible efficiency.

Objectives :

The main objective of this paper is to study different aspects of FII & FDI, and avail useful informations to related class of people, and also investigate the impact of them in Indian Economy.

Sources of Information :

Although the area of research is not very vast, but usually the facts and information are taken from secondary sources.

Definitions :

(1) Institutional investor is a term for entities which pool money to purchase securities, real property and other investment assets or originate loans. Institutional investors include banks, insurance companies, pensions, hedge funds, investment advisors, endowments and mutual funds. Operating companies which invest excess capital in these types of assets may also be included in the term.

(2) **Foreign Institutional Investor (FII) :** An investor or investment funds that is from or registered in a country outside of the one in which it is currently investing. Institutional Investor includes Hedge funds, insurance companies Pension Funds and Mutual Funds.

(3) A Foreign Direct Investment (FDI) is a controlling ownership in a business enterprise in one country by an entity based in another country. Standard definitions of control use the internationally agreed 10 percent threshold of voting share.

Types of Foreign Investment :

Foreign investment in India is of two types: investment by foreign institutional investors (FII) and foreign direct investment (FDI). Foreign investment can be in the form of investment in secondary financial markets or as direct investment in companies (FDI)

Foreign investment is a major source of capital for many industries.

In developing countries, not enough capital is readily available for expansion or setting up new projects. Foreign investment in the form of portfolio investment adds depth and liquidity to secondary markets.

Further in developing economies there is a great demand for foreign exchange within the economy exceeds the supply. Inflows of foreign capital bridge the gap. In fact in India the reserves will now be used for infrastructural development.

Brief History :

The Union Government allowed the entry of FIIs in order to encourage the capital market and attract foreign funds to India. Today, FIIs are permitted to invest in all securities traded on the primary and secondary markets, including equity shares and other securities listed or to be

Assistant Professor (Department of Commerce), Govt.Swami Aatmanand College, Narayanpur (Chhattisgarh)

2016-2017 Entry No. (18)

ISSN: 2230-7850 Impact Factor :4.1625(UIF) Volume - 6 | Issue - 9 | October - 2016

Indian Streams Research Journal

"आदिवासी विकास कार्यक्रमों का जनजातीय पर्यावरण पर प्रभाव नारायणपुर (अबुझमाड़) (छत्तीसगढ़) के विशेष संदर्भ में"

सखाराम कुंजाम
सहायक प्राध्यापक भूगोल
शास0 स्वामी आत्मानंद स्नातकोत्तर महा. नारायणपुर (छत्तीसगढ़)

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध छत्तीसगढ़ प्रदेषके बस्तर जिले के बीहड जंगल प्रकृति की अमूल्य निधि प्राकृतिक सम्पदा है। वहां विचरण करने वाली जनजातिया हैं, जिन्हे वनवासी वा आदिवासी के नाम से सम्बोधित किया जाता है। ये प्रकृति के सच्चे उपासक हैं, ये प्रकृति की गोद में, प्रकृति के प्रति असीम आस्था का विश्वास का स्वरूप, जगह–जगह दिखाई पडता है। जिला नारायणपुर जो बस्तर का अभिन्न अग है, जिसे सन् 2007 में जिला का दर्जा प्राप्त हुआ है। नारायणपुर मे ओरछा विकाखण्ड मे 'अबूझमाड' विशेष आकर्षण का केन्द्र है। जहाँ प्रकृति के प्रति आस्था को सजोये हुए जगली जनजातियो बीहड जगल मे निवास करती हैं। सूर्य उदय होते विचरण करते हुए मिलगे तथा सूर्यास्त होते ही अपने निवास स्थान मे पहुच जाते हैं। इनके दैनिक दिनचर्या में केवल एक दिन का भरण पोषण, कन्द मूल, शहद, फल फूल तथा शिकार का संग्रहण करते हुए दिखाई पडेगे। ये स्वभाव से अति सरल, मृदु भाषी होते हैं। ये इमली के पेड के नीचे चार घास की झोपडी बनाकर अथवा पक्षियों की भाति पेडो के उपर ही 'नीड' अस्थायी निवास बनाते हैं। महिला एवं पुरुषा के वस्त्र मे कोई खास अन्तर नहीं होता है। यहाँ आवागमन परिवहन का कोई साधन नहीं है। ये प्रकृति की गोद में जंगली जानवरों की भांति विचरण करते हुए दिखाई पडते हैं। इनमें आधुनिक वैज्ञानिक–भौतिकवाद का प्रभाव बिलकुल नहीं है।

मुख्य शब्द रू. प्राकृतिक सम्पदा,आदिवासी विकास कार्यक्रम, जनजातीय पर्यावरण पर प्रभाव, नारायणपुर (अबुझमाड) छत्तीसगढ।

परिचय

जनजातीय समाज आज भी प्रकृति के अति निकट है। विश्व की 30 करोड जनसंख्या इन्हीं वन्य जातियों की है, वर्तमान भारत में 6.77 करोड़ जन जातियाँ आवासित हैं जो देश की कुल जनसंख्या का 8.01 प्रतिशत है। छत्तीसगढ की 30.62 प्रतिशत जनसंख्या सन् 2011 की जनगणनानुसार इस वर्ग में आती है। भारतीय संविधान की धारा 342 के अन्तर्गत इन्हें मान्यता देकर विशेष दर्जा प्रदान किया गया है। कठिन भौगोलिक परिस्थितियों में रहने एवं परिवहन के सीमित सुविधाओं के कारण जनजातियों का सम्पर्क देश के अन्य भागों से नहीं रहा। वे अपने वातावरण में अलग ही आत्म निर्भर होती रही तथा बाहरी दुनिया से उनका कोई जीवन्त सम्पर्क नहीं रहा। प्राचीन एवं परम्परागत संस्कृति एवं आर्थिक क्रियाकलाप उनकी विशेषता है। छत्तीसगढ में कुल 42 जनजातियाँ हैं, जो दूरस्थ अंचलों में फैली हुई हैं। आर्थिक दृष्टि से ये पिछड़ी जातियाँ अपने भोजन, वस्त्र, आवास, उद्यम, उपकरण प्रकृति से प्राप्त करती हैं। इनके निवास स्थल सघन वन घास के मैदान, ऊबड़ खाबड़ भूमि तथा नगरों के उपान्त क्षेत्र होती है, जो लघु समूहों में अस्थायी झोपड़ों में रहते हैं। ये भारत के मूल निवासी अपने भैतिक पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी से समायोजन कर अपने जीवन को संचालित करते हैं जैव एवं अजैव की यह परस्पर क्रिया पारिस्थितिकी की तंत्र कही जाती है। वर्तमान में सभ्य समाज के सम्पर्क से इनके इनके पर्यावरण में उपलब्ध भौतिक सम्पदा संसाधन बन गई है। शासन की सहायता के बाद भी ये आपदाओं से आक्रांत है। जनजाति पारिस्थितिकी में उपलब्ध संसाधनों का कैसे उपयोग करें कि संसाधनों का अधिकतम उपयोग तो हो पर ह्रास न हो। वर्तमान में जनजाति समाज में उभरी समस्याओं को उनके भौगोलिक परिवेश एवं पारिस्थितिकी के अनुरूप नियोजन प्रस्तुत करना तथा जनजाति पारिस्थितिकी तंत्र व्यवस्था में दशक में आदिवासी विकास कार्यक्रमों का जनजातीय पर्यावरण पर प्रभाव पाये जाने वाले परिवर्तनों को उद्घाटित करना प्रस्तुत शोध कार्य का मुख्य लक्ष्य है।

छत्तीसगढ में देश की सर्वाधिक जनजाति जनसंख्या निवास करती है भारतीय संविधान की धारा 342 के अन्तर्गत अनुसूचित जनजातियों को मान्यता देकर उनके संरक्षण हेतु आवास शिक्षा, स्वास्थ्य एवं शासकीय सेवाओं में विशेष आरक्षण का प्रावधान किया गया है। प्रति वर्ष केन्द्रीय सरकार करोड़ रुपये उनके पारिस्थितिकी सरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु खर्च करती है, किन्तु उनकी परिस्थितिकी के अनुरूप संसाधनों का प्रबधन किया जाता तो जनजाति संस्कृति नष्ट न होती तथा जनजाति